# प्रमुख फसलों में समेकित रोग प्रबंधन

**महेंद्र सिंह यादव***, **नसीम अहमद*** और **नीलम मेहता***

2020 अन्तर्राष्ट्रीय पादप स्वास्थ्य वर्ष

"आज के परिवेश में पादप रोग का महत्व काफी बढ़ गया है। एक तरफ जमीन व पानी की समस्या है तो दूसरी तरफ जलवायु परिवर्तन काफी तेजी से हो रहा है। तीन दशक पहले जो रोग ढूंढने से भी नहीं मिलते थे, उन्होंने अब प्राथमिक स्थान प्राप्त कर लिया है। कुछ रोगजनकों ने नाशीजीवनाशकों के प्रति रोधिता विकसित कर ली है। समेकित रोग प्रबंधन एक ऐसी प्रणाली है, जिसमें रोगों पर निरंतर निगरानी रखते हुए, सस्य क्रियाओं में सुधार के साथ-साथ भौतिक, यांत्रिक, रोग प्रतिरोधी प्रजातियों का प्रयोग, जैविक क्रियाओं एवं कम से कम रसायनों के उपयोग से रोगों पर उचित समय पर काबू पाया जाता है। आज के दिनों में हम बढ़ती जनसंख्या की खाद्यान्न की मांग को पूरा नहीं कर पा रहे हैं। इसके अलावा आज उपज बढ़ाने में भी बाधाएं आ रही हैं। इसलिए समेकित रोग प्रबंधन का विशेष महत्व है। इन सब बातों के तहत हम पादप रोगों द्वारा हुए नुकसान को कम से कम कर सकते हैं व वातावरण को रसायनों के दुष्प्रभाव से बचा सकते हैं।"

देश की बढ़ती खाद्यान्न की मांग को पूरा करने के लिए अतिरिक्त उत्पादन बढ़ाना अति आवश्यक है। अधिक कृषि उत्पादन प्राप्त करने के लिए तरह-तरह के रासायनिक उर्वरकों और जहरीले नाशीजीवनाशकों का प्रयोग किया जाता है। ये प्रकृति के जैविक और अजैविक तत्वों के बीच आदान-प्रदान के चक्र को प्रभावित करते हैं। उन्नत तकनीक में विभिन्न रासायनिक दवाओं के प्रयोग व अधिक खाद की आवश्यकता के कारण उत्पादन की लागत लगातार बढ़ रही है। रोगों के नियंत्रण के लिए कई तरीकों का समाकलन करना जैसे फसलचक्र, रोग प्रतिरोधी रासायनिक और जैविक उपाय रोकथाम में लाभकारी सिद्ध हो सकते हैं। रोगजनक की मात्रा कम करने के लिए लंबे समय के लिए फसलचक्र अपनाना, रोगग्रसित पौधों के अवशेषों को भूमि में दबाना व खरपतवारों को नष्ट करना बहुत आवश्यक है। हाल ही के वर्षों में टिकाऊ फसल उत्पादन प्रणाली में इच्छुक किसानों ने फसल उत्पादन की उन्नत पद्धतियों को अपनाना प्रारंभ कर दिया है। पौधों में उत्पन्न होने वाले रोगों के कारण लगभग 60 बिलियन रुपये का नुकसान प्रतिवर्ष हो जाता है। यदि पादप रोगों को एक सीमांत स्तर तक नियंत्रित कर दिया जाए तो फसलों के उत्पादन को काफी हद तक बढ़ाया जा सकता है।

**क्या है समेकित रोग प्रबंधन**

समेकित रोग प्रबंधन एक मिश्रित प्रणाली है। इसमें उच्च गुणवत्ता वाले प्रमाणित बीजों का उपयोग काफी हद तक बीजजनित रोगों से निजात दिलाता है। रोगग्रस्त बीज ही बीजजनित रोगों को एक जगह से दूसरी जगह और एक देश से

*भाकृअनुप-राष्ट्रीय समेकित नाशीजीव प्रबंधन अनुसंधान केंद्र, पूसा, नई दिल्ली-110012

सरसों पर सफेद रतुआ रोग का प्रभाव

दूसरे देश में पहुंचाते हैं। अब विश्व में बीज या अनाज का निर्यात करने के लिए इनका रोगरहित होना अति आवश्यक है। इन रोगों को रोकने के लिए समेकित रोग प्रबंधन काफी कारगर सिद्ध हुआ है। समेकित रोग प्रबंधन अपनाकर अच्छी उपज प्राप्त की जा सकती है। इससे रसायनों के प्रयोग को कम करके वातावरण को दूषित होने से बचाया जा सकता है। सस्य क्रियाओं को घटा–बढ़ाकर हम रोगों के आक्रमण को कम कर सकते हैं। समेकित रोग प्रबंधन में निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए:

**खेत की गहरी जुताई**

गर्मियों में खेत की गहरी जुताई कर खुला छोड़ दें। इससे भूमि के अंदर छिपे रोगाणु उच्च तापमान तथा सूर्य की तेज धूप से मर जाते हैं। इससे जमीन पर स्थित फसल के अवशेष तथा खरपतवार आदि भूमि में दब जाते हैं तथा सड़ते रहते हैं। कपास के जड़ गलन रोग के लिए ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई, फसल काट लेने के बाद मिट्टी पलटने वाले हल से करनी चाहिए। ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई सरसों के रोगों के उपचार के लिए भी सहायक होती है। फसल काट लेने के बाद खेत में मिट्टी पलटने वाले हल से गहरी जुताई कर दें, ताकि रोगों के बीजाणु आदि मिट्टी की तह में नष्ट हो जाएं।

**खेत व उसके आसपास स्वच्छता का उचित प्रबंध**

खेत स्वच्छता रोग प्रबंधन की सस्य क्रियाओं का प्रमुख हिस्सा है। यह फसलों के विषाणु रोगों के प्रबंधन में सबसे प्रभावी सिफारिशों में से एक है। खेत स्वच्छता गेहूं में रतुआ एवं कांगियारी को नियंत्रित करने का प्रमुख साधन है।खेत को स्वच्छ कर ऐसे बहुत से रोगों से बचा जा सकता है जो फसल की कटाई के बाद फसल के अवशेषों पर अपना जीवन निर्वाह करते हैं। इनमें गेहूं का मूल विगलन रोग तथा कंडुवा के बीजाणु, कपास एवं चने के उकठा रोग के कवक निराई–गुड़ाई से खरपतवार तो नष्ट होंगे ही, साथ–साथ नीचे की नमी की ऊपरी सतह से वाष्पीकरण द्वारा होने वाली हानि भी कम होगी। रोगी पौधों के अवशेषों को एकत्रित कर जला देना चाहिए।

## फसल चक्र का रोग नियंत्रण में महत्व

अरहर का उकठा रोग

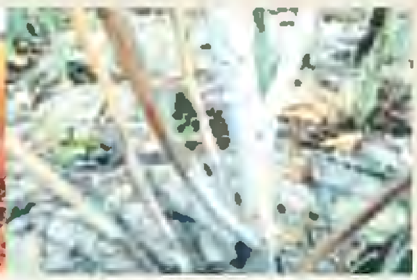

सरसों का स्क्लेरोटीनिया गलन रोग

मृदा के निश्चित क्षेत्र पर निर्धारित समय में फसलों का अदल–बदल कर बोया जाना, जिससे कि मृदा की उर्वराशक्ति बनी रहे, को फसलचक्र कहते हैं। उपयुक्त फसलचक्र अपनाने से अनेक रोगों की रोकथाम की जा सकती है। बाजरा के चेंपा व कांगियारी के लिए 3–4 वर्ष का फसलचक्र अपनाना चाहिए। गेहूं के करनाल बंट और चने का उकठा 3–4 साल का फसलचक्र अपनाने से कम होता है। कपास में जड़ गलन, सरसों का स्क्लेरोटीनिया गलन, अरहर व चना का उकठा रोग लगातार एक ही फसल लेने से बढ़ते हैं। सरसों के तना गलन रोग की रोकथाम के लिए जिस खेत में इस रोग का प्रकोप अधिक हो, उसमें दो साल तक सरसों की फसल न लें। बाजरा रोगों की अधिकता वाले क्षेत्रों में तीन–चार साल का फसलचक्र अपनाएं। जिन खेतों में पिछले वर्ष कपास के जड़ गलन रोग की समस्या रही हो, वहां कम से कम तीन साल तक कपास न बोयें। जड़ गलन वाले खेतों में कपास की एक कतार के बाद मोठ की एक कतार बोयें।

## मिश्रित खेती

दलहनी फसलों के साथ अनाज वाली फसलों को सम्मिलित करके दलहनी फसलों को उकठा रोग से बचाया जा सकता है।चने की फसल को झुलसा रोग से बचाने के लिए चने में सरसों अथवा जौ की कतारें एवं कपास को जड़गलन रोग से बचाने के लिए कपास में मोठ की कतारें लगाई जा सकती हैं।

**भूमि का चुनाव**

अच्छे जल निकास वाली समतल भूमि में रोग कम लगते हैं। इसलिए खेत से जल निकास का उत्तम प्रबंध होना चाहिए। बीज सड़न, जड़ सड़न, आर्द्र गलन व अरहर के फायटोफ्थोरा ब्लाईट आदि रोगों को काफी हद तक भूमि चयन से रोका जा सकता है। तिल व अदरक की खेती भारी काली मृदा अथवा निचली असमतल भूमि में करने से रोग अधिक लगते हैं।

**फसल प्रणाली एवं फसल अनुक्रम**

फसल प्रणाली एवं फसल अनुक्रम, भूमि में रहने वाले रोगों से निदान पाने के प्रभावी उपाय हैं। यह प्रणाली मुर्झान रोग से निदान पाने के लिए वरदान साबित हुई है। इसके अलावा इससे मिट्टी में कार्बनिक एवं भौतिक विविधता बढ़ती है, जिसमें ट्राइकोडर्मा और स्यूडोमोनास मुख्य तौर पर पाए जाते हैं। जिस मिट्टी में ट्राइकोडर्मा एवं स्यूडोमोनास की संख्या कम है वहां पर गोबर की खाद के साथ इसको मिलाकर उपयोग करने से न केवल विभिन्न रोगों से राहत मिलती है बल्कि पौधों की स्वस्थता भी बढ़ जाती है।

**बुआई का समय**

फसलों को सही समय पर बोने से अनेक रोगों से बचाया जा सकता है। उदाहरणतः बाजरे की फसल को जून के आखिरी सप्ताह या जुलाई के पहले सप्ताह में बोने से कोढ़िया/जोगिया (डाउनी मिल्ड्यू) व चेंपा (अरगट) कम लगता है। सरसों की अगेती फसल में सफेद रतुआ कम लगता है।

मक्का की बुआई 15 जून के आसपास करने पर तुलासिता (डाउनी मिल्ड्यू) का प्रकोप कम होता है। देरी से बुआई की गई गेहूं में प्राय: रतुआ का प्रकोप ज्यादा होता है।

**बीज का चुनाव**

स्वस्थ बीज, फसल उत्पादन का मूल आधार है और यह फसलों के अधिक उत्पादन में महत्वपूर्ण योगदान देता है। स्वस्थ एवं अच्छी गुणवत्ता वाले बीज के प्रयोग से उत्पादन अधिक मिलता है। केवल प्रमाणित बीज व रोगरोधी किस्में ही बोनी चाहिए। निरोग बीज, रोगों को नए खेतों में प्रवेश करने से रोकता है। रोगग्रस्त बीज बोने से जमीन में रोग का कवक/जीवाणु बीज के साथ जाने से रोग ज्यादा आ जाता है। रोगी बीज ही रोगी पौधों को जन्म देते हैं। इनमें पनप रहे रोग आसपास के पौधों को भी पीड़ित कर देते हैं। ये रोग की शुरूआत का मुख्य स्रोत बन जाते हैं, जिससे फसल उपज व गुणवत्ता पर प्रतिकूल असर पड़ता है। रोगरोधी बीज बोने का तरीका चना, सरसों, धान, बासमती चावल, मक्का व बाजरा में काफी कारगर है। जहां तक संभव हो सके, रोग प्रतिरोधक सहनशील किस्मों का चुनाव करें। चने की सी-235 झुलसा रोग के लिए सहनशील व हरियाणा चना नं 1 जड़ गलन व उखेड़ा रोग के लिए सहनशील किस्म है। फसलों की नवीनतम विमोचित किस्मों के प्रमाणित बीजों की बुआई करें।

**सूर्य की गर्मी से बीजोपचार**

गेहूं के बीज को खुली कांगियारी रहित करने के लिए मई-जून में शांत एवं सूरज के तेज धूप वाले दिन 8-12 बजे तक पानी में भिगोयें। उसके बाद उसे पतली परत के रूप में पक्की जमीन पर सुखा दें। सुखाये गए बीजों का बोने के समय तक सुरक्षित भंडारण करें।

**उर्वरकों का प्रयोग**

उर्वरकों का संतुलित मात्रा में प्रयोग करें। नाइट्रोजन व फॉस्फोरस सही मात्रा में प्रयोग करना चाहिए।रोग के प्रारंभिक लक्षण दिखाई देने पर नाइट्रोजन खादों का प्रयोग रोक देना चाहिए तथा उस मात्रा को दो-तीन भागों में बांटकर डालना चाहिए। राया-सरसों की फसल में नाइट्रोजनयुक्त उर्वरकों की मात्रा सिफारिश के अनुसार ही देनी चाहिए। इनके अधिक प्रयोग से कीटों का आक्रमण ज्यादा होता है। दूसरी तरफ पोटाशयुक्त उर्वरकों को देने से कीटों के प्रजनन व उत्सर्जन पर बुरा प्रभाव पड़ता है। इन उर्वरकों का संतुलित व सिफारिश के अनुसार ही प्रयोग करना चाहिए।

## बीजोपचार से रोगों का नियंत्रण

फसलों में नई-नई किस्मों के प्रयोग तथा सघन कृषि उत्पादन तकनीकी ने नए मृदा और बीजजनित रोगों को बढ़ावा दिया है। ये फसलोत्पादन घटाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। कई पौध रोग पूर्णत: या अंशत: बीजोढ़ होते हैं। बीजोपचार रोगों को रोकने का सबसे सरल, सस्ता व प्रभावी तरीका है। बीजोपचार द्वारा रोगजनक को खेत में जाने से रोककर हम काफी हद तक रोग की तीव्रता को कम कर सकते हैं। बीज से पैदा होने वाले रोगों पर नियंत्रण के लिए बीजोपचार आवश्यक है। गेहूं की खुली कांगियारी से बचाव के लिए 2 ग्राम वीटावैक्स अथवा बाविस्टिन से प्रति कि.ग्रा. बीज का उपचार करें। भौतिक, जैविक व रासायनिक बीजोपचार से रोगों का नियंत्रण काफी हद तक संभव है। उदाहरणत: स्वस्थ बीजों में से रोगी बीजों व फफूंद के पिंडों को भौतिक विधियों द्वारा छानकर अलग किया जा सकता है। जैसे कि छन्नी से छानकर, नमकयुक्त पानी में डुबोकर, जैविक नियंत्रण जिसके अंतर्गत विभिन्न सूक्ष्मजीवियों के प्रयोग द्वारा फसलों को हानि पहुंचाने वाले कवकों, जीवाणुओं एवं सूत्रकृमियों को नियंत्रित किया जा सकता है। प्रमुख जैविक जीवनाशी एस्पर्जिलस नाइगर और स्यूडोमोनास का जैविक उत्पादन में सफलतापूर्वक प्रयोग किया जाता है। जरूरत के अनुसार फफूंदनाशी या जीवाणुनाशी दवाएं बीज में चूर्ण के रूप में मिलाने से भी अनेक रोगों की रोकथाम की जा सकती है।

गेहूं में खुली कांगियारी रोग का असर

गेहूं का पीला रतुआ

**पौधे से पौधे की दूरी रोग**

बीज की उचित मात्रा और पौधे से पौधे एवं कतार से कतार की उचित दूरी बनाए रखें, जिससे पौधों को समुचित प्रकाश मिल सके।

**खड़ी फसल में रोग उन्मूलन**

फसल का नियमित रूप से निरीक्षण करें तथा रोगी पौधों को खेत से सावधानी से बाहर निकाल कर नष्ट कर दें। गेहूं की खुली व पत्ते की कांगियारी, बाजरे की स्मट, चेंपा वाले पौधे को खेत से बाहर निकाल कर नष्ट कर दें। कपास की फसल की लगातार निगरानी रखनी चाहिए व पत्ती मरोड़ रोग से ग्रस्त पौधों को बढ़वार की अवस्था तक उखाड़कर दबा देना चाहिए।

**जैविक नियंत्रण विधियां**

जैविक नियंत्रण, रोग प्रबंधन कार्यक्रम में सबसे सफल सिद्ध हुआ है। यह एक प्राकृतिक पारिस्थितिक घटना है, जो स्वयं चल रही है। जैव नियंत्रण अपनाने से पर्यावरण दूषित नहीं होता है। प्राकृतिक होने के कारण इसका असर लंबे समय तक बना रहता है। जैविक नियंत्रण केवल विशिष्ट नाशीजीवों पर ही आक्रमण करता है। अन्य जीव, प्रजातियों, कीटों, फसलों, वनस्पतियों व मानव पर इसका कोई दुष्प्रभाव नहीं होता। इनका उपयोग सस्ता होता है एवं किसान अपने घर पर भी इसका उत्पादन कर सकता है। जैविक विधि में सूत्रकृमि, कवक जीवाणु और विषाणु सम्मिलित किए जाते हैं, जो पर्यावरण पर कोई हानिकारक प्रभाव नहीं छोड़ते हैं।

**रसायनों का छिड़काव**

यदि उपरोक्त विधियों द्वारा रोग नहीं रुकते तो कवकनाशियों/जीवाणुनाशियों का उचित समय पर प्रयोग करके रोगों का नियंत्रण किया जा सकता है। रसायनों का प्रयोग विचारहीनता से करने पर पर्यावरण प्रदूषित होता है। इसलिए रसायनों का छिड़काव विशेष रोगों के लिए करना चाहिए। ■